विशद
जिनगुण सम्पत्ति विधान

अर्घ्य-16
5
8
10
10
14

रचयिता

प.पू. आचार्य विशदसागरजी महाराज

कृति – **विशद जिनगुण सम्पत्ति विधान**

कृतिकार – प.पू. साहित्य रत्नाकर, क्षमामूर्ति
आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज

संस्करण – द्वितीय -2013 • प्रतियाँ :1000

संकलन – मुनि श्री 108 विशालसागरजी महाराज

सहयोग – क्षुल्लक श्री विसोमसागरजी

संपादन – ब्र. ज्योति दीदी (9829076085) आस्था दीदी9660996425, सपना दीदी

संयोजन – किरण, आरती दीदी • मो. 9829127533

प्राप्ति स्थल – 1 जैन सरोवर समिति, निर्मलकुमार गोधा,
2142, निर्मल निकुंज, रेडियो मार्केट
मनिहारों का रास्ता, जयपुर
फोन : 0141-2319907 (घर) मो.: 9414812008

2. श्री राजेशकुमार जैन ठेकेदार
ए-107, बुध विहार, अलवर मो.: 9414016566

3. विशद साहित्य केन्द्र
C/o श्री दिगम्बर जैन मंदिर कुआँ वाला जैनपुरी
रेवाड़ी (हरियाणा) प्रधान-09416882301

मूल्य – 31/- रु. मात्र

-: अर्थ सौजन्य :-

श्री दिगम्बर जैन मंदिर

10/1, भगवान महावीर मार्ग, वसुन्धरा-201012, गाजियाबाद (उ.प्र.)
मो. 9310515066

कृतिकार का कथन

शब्द नहीं हैं पास हमारे, जो प्रभु का गुणगान करें।
ज्ञान नहीं है पास हमारे, जिससे हम पहचान करें।।
मात्र समर्पण हैं प्रभु पद में, उस पर है अधिकार मेरा।
द्रव्य नहीं है पास हमारे, जो प्रभु तुम्हें प्रदान करें।।

यत्र-तत्र-सर्वत्र विहार करना आगम सम्मत है। आगम का आदेश है अतः जहाँ भी जाते हैं तो पूजन, भक्त, पुजारी अपनी भावनाओं को लेकर आते हैं, पूजा विधान होते हैं। लोग अपनी भावना के अनुसार कामना भी करते हैं।

एक बार कुछ जैनों को देवी के मंदिर में पूजा करने हेतु जाते देखा मन में भावना हुई कोई तन दुःखी, कोई मन दुःखी, कोई धन दुःखी दीखे, अतः लोगों को सम्यक् आराध्य की ओर कैसे मोड़ा जाए तब मन में आया सम्पूर्ण विश्व में लोग भगवान पार्श्वनाथ के प्रति श्रद्धालु हैं। उनकी भक्ति के दीवाने हैं। पार्श्वनाथ का विधान लिखना चाहिए, प्रथम प्रयासपूर्ण हुआ। 1 जनवरी, 2005 को विधान किया गया। लोगों को बहुत पसन्द आया, अब तो लोगों की लाईन लग गई। महाराजश्री आपकी लेखन-शैली इतनी सरल और लयबद्ध है कि अन्यत्र कहीं नहीं देखी जाती। चन्द्रप्रभु, महावीर, तत्त्वार्थ सूत्र इत्यादि अनेक निवेदन आये कि यह विधान बनाएँ, अपने आवश्यक कर्त्तव्य के बीच से समय निकालकर कृतियों की रचना की। इसी बीच कुछ लोगों ने निवेदन किया-महाराजश्री **''जिनगुण सम्पत्ति विधान''** आपकी शैली में होना चाहिए। अति आग्रह देख कलम उठाई, अतः कृतिकारों की रचनाओं को आधार लेकर इस विधान की रचना की गई, हो सकता है भव्यजनों को यह कृति पसन्द आये तो मैं अपने आपको सौभाग्यशाली मानूँगा।

मेरी यही भावना है कि अधिक से अधिक लोग यह कृति पाकर सदुपयोग कर लाभान्वित हों तथा मेरे लिए अनुग्रहीत करें।

-आचार्य विशदसागर (रेवाड़ी)

मेरे उद्‌गार

जिनगुण सम्पत्ति व्रत करो, मन में कर निज ध्यान।
नर सुर के सुख भोग कर, पावो पद निर्वाण।।

भारतीय श्रमण परम्परा का इतिहास उतना ही प्राचीन है जितना सृष्टि का निर्वाण। पंचमकाल के अंत तक यह श्रमण परम्परा इसी प्रकार अक्षुण्ण बनी रहेगी। जिस दिन साधु का अभाव हो जायेगा उसी दिन से अग्नि, धर्म व राजा का अभाव हो जायेगा।

वर्तमान में शुक्ल ध्यान तो हो नहीं सकता व धर्मध्यान के माध्यम से ही मुक्ति का मार्ग प्रशस्त किया जा सकता है और मुक्ति प्रभु भक्ति से ही प्राप्त की जा सकती है।

परम पूज्य क्षमामूर्ति चँवलेश्वर के छोटे बाबा, आचार्य श्री 108 **विशदसागरजी महाराज** ने आज जहाँ भौतिकता की चकाचौंध में मानव पापों में डूबता जा रहा है वहीं हमारे लिए भक्ति का अवसर देकर पुण्यास्रव का अवसर प्रदान किया है। पूज्य आचार्यश्री ने ध्यान की गहराई में उतरकर हमारे लिए सुन्दर सरस, सरल, अनमोल शब्दरूपी मोती की एक माला में पिरोकर **''जिनगुण सम्पत्ति विधान''** की रचना कर यह कृति प्रदान की है।

अंत में वीर प्रभु से यही प्रार्थना करती हूँ कि पूज्य आचार्यश्री को आरोग्य लाभ हो, वे युग-युग तक धर्म की अभूतपूर्व प्रभावना करते रहें। पूज्य आचार्यश्री के चरणों में मन-वचन-काय पूर्वक कोटि-कोटि नमन्, वंदन।

भौतिकता की इस दुनिया में इच्छाओं का अन्त नहीं है।
चारों गतियों में भटकादे, वो भी सच्चा पंथ नहीं है।।
हुए अनेकों पंथ अनेकों संत और महंत लेकिन।
पंचम काल में 'विशदसागर' सा दूजा कोई संत नहीं है।।

-ब्र. आरती दीदी (संघस्थ आचार्यश्री विशदसागरजी)

जिनगुण सम्पत्ति व्रत कथा

बन्दूं आदि जिनेन्द्र पद मन वच शीश नवाय।
जिन गुण सम्पत्ति व्रत कथा कहूँ भव्य सुखदाय।।

धातकी खण्ड द्वीप के पूर्व मेरू सम्बन्धी पश्चिम विदेह क्षेत्र में गांधील नामक देश और पाटलिपुत्र नाम का नगर अपनी शोभा से युक्त है। उस नगर में नागदत्त नाम का एक सेठ और सुमति नाम की सेठानी ये दोनों दम्पत्ति रहते थे, इनके पास द्रव्य न था, धनहीन होने के कारण अत्यन्त पीड़ित थे, ये दोनों दम्पत्ति जंगल में से काठ आदि लाकर उसे बेचकर अपना पेट पालन करते थे। एक दिन बेचारी सेठानी जंगल में भूख–प्यास से घबरा कर एक वृक्ष की छाया में बैठी थी, इतने में बहुत से नर–नारियों के झुंड को बड़े उत्साह के साथ जाते देखकर आश्चर्य युक्त होती हुई उनसे पूछा–

अहो बन्धुओं ! माता–बहिनों ! आज आप बड़े उत्साह के साथ हाथों में अनेक प्रकार की सुन्दर सामग्री लेकर कहाँ जा रहे हो ? यह कौनसा उत्सव है ? यह सुनकर जनसमूह ने उत्तर दिया कि इस अम्बरतिलक नाम के पर्वत पर पिहिताश्रव नाम के बड़े ज्ञानी मुनिराज आये हैं। उनके दर्शन–पूजन करने के लिए हम सब लोग बड़े उत्साह से जा रहे हैं। यह शुभ समाचार सुनकर सुमति सेठानी फूली न समाई और बड़ी भक्ति से सब लोगों के साथ वन्दना करने के लिए चल दी।

क्रमशः सब लोग मुनिराज के पास पहुँच गये, सब ही बड़ी भक्ति से अष्ट द्रव्यों से पूजन दर्शन करते हुए अपने जीवन को सफल बनाते हुए मन–वचन–काय को एकाग्र करके मुनिराज का धर्मोपदेश सुनने के लिये बैठ गये।

मुनिराज ने अपने उपदेश में देवपूजा, गुरु सेवा, स्वाध्याय, संयम,

तप, दान देना, इन षट् कर्मों का तथा अहिंसा, सत्य, अचौर्य, स्वदार–सन्तोष और परिग्रह परिमाण ये पाँच अणुव्रत, चार शिक्षाव्रत, तीन गुणव्रत इस तरह बारह व्रतों का उपदेश देते हुए सम्यग्दर्शन का स्वरूप बतलाया, इस प्रकार उपदेश सुनकर सब लोग अपने–अपने स्थान को चले गये।

दरिद्रता से अत्यन्त दुःखी सुमति सेठानी समय पाकर मुनिराज से अपने दुःखों की कहानी कहने लगी–हे भगवान् ! हे दीनबन्धु ! हे दयासागर ! हे पतितपावन ! हे भवतारक ! मैं गरीब अबला दरिद्रता से अत्यन्त दुःखी होकर दुःखों को भोग रही हूँ।

मैं इस दुःख से बहुत ही व्याकुल हो गई हूँ, स्वामिन् ! किस कारण से मेरे से सम्पत्ति दूर जा रही है और अब किस तरह वह सम्पत्ति मिल सकती है, जिससे मेरा यह दुःख मिट कर मैं सुख का अनुभव करूँ, क्योंकि दरिद्रता मिटे बिना धर्म साधन करने के लिए यह मनुष्य असमर्थ रहता है, किसी कवि ने कहा भी है–

''भूखे भक्ति न होय, धर्माधर्म न सूझे कोय''

भगवन् यही हालत मेरी हो रही है। जिस समय सब लोग धर्मोपदेश सुन रहे थे उस समय दरिद्रा सेठानी अपनी दारिद्ररूपी तत्त्व के विचार में निमग्न हो रही थी इसलिए उसने अवसर पाकर अपना विचार फौरन ही कह सुनाया।

जिनके राजा–रंक, महल–श्मशान, काच–कन्चन, शत्रु–मित्र समान हैं। ऐसे उन करूणार्णव स्वामी ने बड़े शीतल एवं शांतता से उस सुमति सेठानी को निम्न प्रकार से समझाया–

हे सुमति ! तुम सुनो–पलारकूट नामक गाँव में दिबिलह नाम का राजा सुमति नाम की रानी तथा रूप यौवन नाम सम्पन्न धनश्री नाम की इनक एक लड़की थी, एक दिन वह धनश्री अपनी 5–7 सखियों के साथ

वन–क्रीड़ा करने को शहर के बाहर उद्यान में (बाग में) गई, वहाँ पर परम तपस्वी उद्भट विद्वान समाधिगुप्त नाम के मुनिराज एक वृक्ष के नीचे ध्यानमग्न बैठे हुए थे, तब वह मदोन्मत अपने रूप यौवन से गर्विष्ठ धनश्री मुनिराज को देखकर निन्दात्मक अनेक प्रकार के भण्ड वचन बोली और मुनिराज के ऊपर बहुत से शिकारी कुत्ते छोड़े जिससे मुनिराज के ऊपर भारी उपसर्ग हुआ किन्ती धीर वीर परम तपस्वी वे मुनिराज अपने ध्यान से विचलित नहीं हुए।

इस मुनि निन्दा के कारण धनश्री आयु पूर्णकर मरकर सिंहनी हुई और सिंहनी पर्याय को पूर्ण करके मरकर तू धनहीन दरिद्री सुमती सेठानी हुई, जो कोई मूर्ख इस तरह मुनि निन्दा व उन पर उपसर्ग करता है वह इसी तरह नीच गति को प्राप्त होकर अनेक प्रकार के कष्टों को कहता है।

सुमति सेठानी अपने पूर्वभव सुनकर बहुत दुःखी होकर रोने लगी फिर हिम्मत कर दोनों हाथ जोड़कर गुरुदेव से पूछने लगी, गुरु महाराज ! इस महापाप से कैसे छुटकारा पाऊँगी।

सुमति तुम घबराओं नहीं, तुम सम्यग्दर्शन पूर्वक जिनगुण सम्पत्ति व्रत करो जिससे तुम्हारे मनवांछित कार्य की सिद्धि निश्चित होगी।

इस व्रत की विधि इस प्रकार से है कि प्रथम जिन सोलह कारण भावनाओं को भाने से (अनुभव करने से) मनुष्यों के तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध होता है ऐसे उनके 16 उपवास, पंच परमेष्ठी के 5, अष्ट प्रातिहार्य के 8, चौंतिस अतिशयों के 34 इस तरह कुल 63 उपवास या प्रोषध (एक भक्ति) करे, उपवास के दिन तमाम गृहारम्भ परिग्रह छोड़कर भगवान् का पंचामृताभिषेक करके बड़े समारोह के साथ पूजन करें और दिन में तीन वक्त समायिक, स्वाध्यायादि करें, जब तक व्रत पूर्ण नहीं होवे तब तक इसी तरह करती रहें।

उपवास अथवा एकाशन के दिन जिनगुण सम्पत्ति मंत्रों में से जिन मंत्र का दिन हो, उस दिन उस मंत्र का जाप करें।

व्रत पूर्ण होने पर सविधि उद्यापन करें, उद्यापन की शक्ति नहं हो तो व्रत को दूना करें। व्रतोद्यापन इस प्रकार करें, मन्दिर में कोई एक मण्डप माण्ड कर बड़े समारोह के साथ भगवान् की स्नपनपूर्वक पूजा करें, पात्रदान देवें यथा नाम शक्ति गरीबों को दान देवें। आम, केले, नारंगी, श्रीफल, बिजोरे, अखरोट, खारिक, बादाम इत्यादि त्रेसठ 63 फल और अनेक प्रकार की नैवेद्य सहित भगवान की पूजन करें जिनालय में चंदोवा, चंवर, छत्र, झालर, घंटा आदि उपकरण भेंट करें, ज्ञानावरणी कर्मक्षयार्थ श्रावक–श्राविकाओं को 63 ग्रंथ बाँटे।

सुमति सेठानी ने मुनिराज के मुखकमल से व्रतों की विधि सुनकर व्रत को ग्रहण किया और यथाशक्ति व्रत का पालन करके उद्यापन किया, आयु के अन्त में सन्यास मरण करके स्वर्ग में ललितांग देव की पट्टरानी देवी हुई, पुण्य प्रभाव से व्रत के माहात्म्य से वह स्वयंप्रभा देवी अनेक प्रकार के सुखों का अनुभव करने लगी, देवी पर्याय पूर्ण करके स्वर्ग से चलकर जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह चक्रवर्ती की लक्ष्मीवती नाम की रानी के उदर से श्रीमती नाम की पुत्री हुई, इस लड़की का विवाह वज्रजंघ राजा के साथ हुआ।

एक दिन ये दोनों दम्पत्ति वनक्रीड़ा करने के लिये गये, वहाँ पर सर्प सरोवर के तटपर मुनिराज के दर्शन किये और उन्हीं चारण ऋषीश्वरों को बड़ी भक्ति से आहार दिया। उस आहारदान के प्रभाव से दोनों दम्पत्ति भोगभूमि में उत्पन्न हुये, वहाँ से देव हुये। देव आयु पूर्ण करके जम्बूद्वीप में मनुष्य पर्याय को धारण करके उत्कृष्ट आर्यिका के व्रत धारण किये और उत्कृष्ट व्रतोपवासादि करके बड़ी तपस्या की। अन्त में सन्यास धारण कर स्त्री लिंग छेदकर दूसरे स्वर्ग में देव हुई, वहाँ की आयु समाप्त कर जम्बूद्वीप

के पूर्व विदेह सम्बन्धी वत्सलावती देश में सुसीमा नाम की नगरी में सुबुधि नामक राजा की मनोरमा रानी उदर से केशव नाम का पुत्र हुआ, केशव ने अपने पिता के दिये हुए राज्य को न्यायनीति पूर्वक चलाया और अनेक प्रकार के भोगों को भोगा, कोई कारण पाकर वैराग्य हो गया और श्रीमंदर स्वामी के चरण निकट में दिगम्बरी दीक्षा धारण करके घोर तप किया। तप के प्रभाव से सोलहवें स्वर्ग में देव हुआ, वहाँ 22 सागर पर्यन्त सुखानुभव करके वहाँ से चलकर जम्बूद्वीप के विदेह क्षेत्र में पुष्कलावती रानी के उदर से धनदेव नामक पुत्र हुआ वह चक्रवर्ती का भण्डारी हुआ।

एक दिन धनदेव चक्रवर्ती के साथ मुनिराज का धर्मोपदेश सुनकर वह धनदेव वैराग्य को प्राप्त हो गया और कर्मनाशिनी जिनदीक्षा को धारण करके घोर तपस्या करके आयु के अन्त में मरण कर सर्वार्थसिद्धि में अहमिन्द्र हो गया। वहाँ से चलकर भरत क्षेत्र के कुरूजांगल देश में हस्तिनापुर नगरी में श्रेयान्स का राजा हुआ। इन्होंने बहुत दिनों तक राज्य वैभव के नोहर भोग भौगे और श्री 1008 श्री प्रथम तीर्थंकर ऋषनाथ भगवान को भक्ति पूर्वक आहार दान दिया, उस दान के प्रभाव से दानवीर कहलाये। कारण दान की प्रथा श्रेयांस राजा द्वारा ही चालू हुई, इसके बाद वह राजा श्रेयान्स ऋषभनाथ भगवान के मुख से धर्मोपदेश सुनकर वैराग्य प्राप्त कर जिनदीक्षा लेकर उग्र तप करते हुए आत्मा में निमग्न हो गए और उस शुक्ल ध्यान के प्रभाव से केवलज्ञान उत्पन्न करके मोक्षपद को प्राप्त हुए।

इस प्रकार सुमति नाम की दरिद्रा सेठानी ने जिनगुण सम्पत्ति व्रत सम्यग्दर्शन पूर्वक चालन करके अनुक्रम से मोक्ष पद प्राप्त किया। इसी प्रकार जो भव्य जीव जिनगुण सम्पत्ति नाम के व्रतों को विधिपूर्वक करेंगे वे भी निश्चित रूप से सुमति सेठानी के समान अविनाशी पद को प्राप्त होंगे।

जिनगुण सम्पत्ति व्रत करो, मनमें कर जिन ध्यान।
नर सुर के सुख भोग कर, पावो पद निर्वाण।।

जिनगुण सम्पत्ति स्तवन

सहज शांत रस लीन रहें जो, सहज शांत रस कूप कहे।
विश्व शांति के उन्नायक प्रभु, विशद शांति स्वरूप रहे।।
अखिल शांति संस्थापक स्वामी, त्रिभुवन के स्वामी गाये।
विधिवेत्ता अनुपम हो भगवन, आप विधाता कहलाए।।1।।

सदा हिमालय से बहती है, जैसे गंगा की धारा।
त्यों आगम का स्रोत आपसे, बहता है प्यारा-प्यारा।।
नाम आपका मंगलकारी, अनुपम शांति प्रदान करे।
जैसे औषधि रूग्ण जनों के, मन का सारा क्लेश हरे।।2।।

शांति प्रसारण में प्रभु तुमने, शांति का संदेश दिया।
परम अहिंसा धर्म जगत में, देकर जग कल्याण किया।।
तीन लोक के सारे प्राणी, आत्म शांति की चाह करें।
दुःख आने पर घबड़ाते हैं, अन्तर मन से आह भरें।।3।।

श्रेष्ठ धर्म का मूल अहिंसा, विश्व शांति का है आधार।
गुण गाने से नाथ आपके, शांति मिलती अपरम्पार।।
है शांति नर नाथ आपके, शरण आज हम आए हैं।
क्षत्र छाया बनी रहे प्रभु, यही भावना भाए हैं।।।4।।

विश्व प्रकाशी सूरज नभ में, अपनी आभा बिखराते हैं।
प्रभु आपके श्रीपद पाकर, सादर शीश झुकाते हैं।।
चरण आपके बिठा हृदय में, शांति पूर्ण पा जाते हैं।
जग वैभव की बात करें क्या, विशद शांति पा जाते हैं।।5।।

दोहा- लौ जागे सुख शांति की, यही भावना एक।
सुख-शांति के लिए हम, कीन्हें प्रयत्न अनेक।।

।। इति पुष्पाञ्जलिं ।।

जिनगुण सम्पत्ति पूजन

(स्थापना)

सोलह कारण भावना, पूर्व भवों में भाते हैं।
तीर्थंकर प्रकृति के बन्धक, पञ्च कल्याणक पाते हैं।।
चौंतिस अतिशय पाने वाले, प्रातिहार्य प्रगटाते हैं।
अनन्त चतुष्टय प्रकट करें जो, केवलज्ञान जगाते हैं।।
प्राप्त हमें हो जिनगुण सम्पत्ति, शिव पद में होवे विश्राम।
विशद हृदय में आह्वानन कर, करते बारम्बार प्रणाम।।

ॐ ह्रीं श्री जिनगुण सम्पत्ति समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्री जिनगुण सम्पत्ति समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्री जिनगुण सम्पत्ति समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(वीर छंद)

गंगा यमुना का निर्मल जल, तन का मल ही धो पाता है।
जो लगा कर्म मल चेतन में, वह रत्नत्रय से जाता है।।
हम जिनगुण की पूजा करके, अब निज गुण पाने आए हैं।
अब जिनगुण सम्पत्ति पाने को, यह नीर चढ़ाने लाए हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिषष्टि जिनगुण सम्पद्भ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभित चन्दन की शीतलता, नर देह ताप को शांत करे।
क्रोधादि कषायों का आतप, जिनधर्म गंध उपशांत करे।।
हम जिनगुण की पूजा करके, अब निज गुण पाने आए हैं।
अब निजगुण सम्पत्ति पाने चंदन, हम यहाँ चढ़ाने लाए हैं।।2।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिषष्टि जिनगुण सम्पद्भ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

आतम स्वरूप अक्षय अखण्ड, जो संयम से मिल पाता है।
संयम के उपवन में सौरभ, जिसका अतिशय खिल जाता है।।
हम जिनगुण की पूजा करके, अब निज गुण पाने आए हैं।
अब जिनगुण की सम्पत्ति पाने, यह अक्षय अक्षत लाए हैं।।3।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिषष्टि जिनगुण सम्पद्भ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पों को पाकर मन मेरा, अतिशय पुलकित हो जाता है।
भँवरे सम भ्रमण किया करती, न आत्म ज्ञान जग पाता है।।
हम जिनगुण की पूजा करके, अब निज गुण पाने आए हैं।
अब जिनगुण सम्पत्ति पाने को, यह पुष्प चढ़ाने लाए हैं।।4।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिषष्टि जिनगुण सम्पद्भ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रेष्ठ सरसव्यंजन खाकर भी, ना तृप्त कभी हो पाते हैं।
वह जिह्वा स्वाद के बाद सभी, क्षणभर में ही नश जाते हैं।।
हम जिनगुण की पूजा करके, अब निज गुण पाने आए हैं।
अब जिनगुण सम्पत्ति पाने को, नैवेद्य चढ़ाने लाए हैं।।5।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिषष्टि जिनगुण सम्पद्भ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है मोह तिमिर का अँधियारा, सदियों से हमें घुमाया है।
भव-भव में दुःख सहे हमने, नहिं सुपथ हमें दिख पाया है।।
हम जिनगुण की पूजा करके, अब निज गुण पाने आए हैं।
अब जिनगुण सम्पत्ति पाने को, हम दीप जलाकर लाए हैं।।6।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिषष्टि जिनगुण सम्पद्भ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

हमने कर्मों को जड़ माना, अरु बन्ध सदा करते आये।
अज्ञानी बनकर ठगे स्वयं, न कर्म बन्ध से बच पाए।।
हम जिनगुण की पूजा करके, अब निज गुण पाने आए हैं।
अब जिनगुण सम्पत्ति पाने को, यह धूप जलाने लाए हैं।।7।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिषष्टि जिनगुण सम्पद्भ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल दाता जग में कोई नहीं, हर जीव स्वयं फल पाता है।
किन्तु यह फल की आशा में, चारों गति में भटकाता है।।
हम जिनगुण की पूजा करके, अब निज गुण पाने आए हैं।
अब जिनगुण सम्पत्ति पाने को, यह श्रेष्ठ श्रीफल लाए हैं।।8।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिषष्टि जिनगुण सम्पद्भ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जिस गति में जन्म मिला हमको, उस गति में ही रम जाते हैं।
शुभ पद अनर्घ्य को पाने का, पुरुषार्थ नहीं कर पाते हैं।।
हम जिनगुण की पूजा करके, अब निज गुण पाने आए हैं।
अब जिनगुण सम्पत्ति पाने को, यह अर्घ्य बनाकर लाए हैं।।9।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिषष्टि जिनगुण सम्पद्भ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा– श्री जिनेन्द्र के गुण तथा, जिनवर पूज्य त्रिकाल।
जिनगुण सम्पत्ति की यहाँ, गाते हैं जयमाल।।

शम्भू छंद

सुर नर विद्याधर नरेन्द्र भी, पद में शीश झुकाते हैं।
तीर्थंकर के पाद मूल में, जिनगुण पाने आते हैं।।
जिन गुण सम्पद मोक्षमार्ग में, अतिशय कारण जाना है।
तीर्थंकर प्रकृति के कारण, सोलह कारण माना है।।1।।
दर्श विशुद्धि आदि सोलह, भव्य भावना भाते हैं।
प्रबल पुण्य से भव्य जीव ही, तीर्थंकर पद पाते हैं।।
गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष यह, उत्सव पंच कहाते हैं।
तीर्थंकर प्रकृति के बन्धक, कल्याणक यह पाते हैं।।2।।
धर्म तीर्थ के नेता बनकर, मोक्षमार्ग दर्शाते हैं।
पञ्च परावर्तन तजकर के, शिव पदवी को पाते हैं।।
छत्र चँवर भामण्डल अनुपम, दिव्य ध्वनि सुनाते हैं।
पुष्प वृष्टि सुर सिंहासन तरु, दुन्दुभि देव बजाते हैं।।3।।
तीर्थंकर पद की महिमा यह, प्रातिहार्य प्रगटाते हैं।
समवशरण लक्ष्मी के भर्त्ता, त्रिभुवनपति कहलाते हैं।।
जन्म समय की महिमा अनुपम, दश अतिशय जिन पाते हैं।
केवलज्ञान के दश अतिशय जिन, ज्ञान जगे प्रगटाते हैं।।4।।
चौदह अतिशय देव शरण में, आकर श्रेष्ठ दिखाते हैं।

श्री जिनेन्द्र चौंतिस अतिशय यह, महिमाशाली पाते हैं।।
इस प्रकार त्रेसठ गुण के शुभ, त्रेसठ जो व्रत करते हैं।
ऋद्धि–सिद्धि सौभाग्यप्रदायक, कोष पुण्य से भरते हैं।।5।।
प्रतिपदा के सोलह व्रत हैं, पाँच पञ्चमी के जानो।
आठ अष्टमी के व्रत भाई, बीस दशें के तुम मानो।।
चौदस के व्रत चौदह होते, जोड़ सभी त्रेसठ गाए।
भाव सहित जो व्रत करते हैं, वह जिनगुण सम्पद पाए।।6।।
श्रावक और श्राविका कोई, विधि सहित व्रत करते हैं।
सुख शांति पा जाते हैं वह, अपने सब दुःख हरते हैं।।
रोग मरी दुर्भिक्ष कलह से, उनकी रक्षा होती है।
भूत पिशाच आदि कोई भी, सर्व आपदा खोती है।।7।।
ओज तेज बल वृद्धि वैभव, स्वर्गों के सुख पाते हैं।
कामदेव चक्री बनकर के, तीर्थंकर बन जाते हैं।।
समवशरण सा वैभव पाकर, मोक्ष लक्ष्मी पाते हैं।
सिद्ध शिला पर जाने वाले, शिव सुख में रम जाते हैं।।8।।
यही भावना भाते हैं प्रभु, कर्म सभी क्षय हो जावें।
बोधि समाधि लाभ प्राप्त हो, सुगति गमन हम भी पावें।।
होवे मरण समाधि मेरा, जिनगुण सम्पदा पा जावें।
'विशद' ज्ञान को पाकर हम भी, परम श्रेष्ठ शिव सुख पावें।।9।।

(धत्ता छंद)

जय जय जिन स्वामी, शिवपथ गामी, जिनगुण सम्पत के स्वामी।
तव चरण नमामि त्रिभुवननामी, बनो प्रभो ! मम पथ गामी।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिषष्टि जिनगुण सम्पद्भ्यो अनर्घपदप्राप्तये जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– सुर गणपति न कर सकें, गुण गणना तव नाथ।
वह गुण पाने हेतु तव, चरण झुकाते माथ।।

इत्याशीर्वादः

सोलहकारण भावना पूजा

स्थापना

सोलह कारण भावना, भाते हैं जो जीव।
तीर्थंकर पद प्राप्त कर, पाते सौख्य अतीव।।
कर्म घातिया नाशकर, पावें केवलज्ञान।
सोलह कारण भावना, का करते आह्वान।।
है अन्तिम यह भावना, हृदय जगे श्रद्धान।
सर्व कर्म का नाश हो, मिले सुपद निर्वाण।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि षोडशकारणानि ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितों भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(चाल–छन्द)

हमने संसार बढ़ाया, न रत्नत्रय को पाया।
हम नीर सु निर्मल लाए, जन्मादि नशाने आए।।
है भव्य भावना भाई, शुभ तीर्थंकर पद दायी।
हम सोलह कारण भाते, नत सादर शीश झुकाते।।1।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धि, विनयसम्पन्नता, शीलव्रतेष्वनतिचार, अभीक्ष्णज्ञानोपयोग, संवेग, शक्तितस्त्याग, शक्तितस्तप साधु–समाधि, वैयावृत्यकरण, अर्हद्भक्ति, आचार्यभक्ति, बहुश्रुतभक्ति, प्रवचनभक्ति, आवश्यकापरिहाणि, मार्ग प्रभावना, प्रवचन वात्सल्य, इति षोडश कारणेभ्योः नमः जन्म–जरा–मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों ने हमें सताया, भारी संताप बढ़ाया।
हम चन्दन घिसकर लाए, भव ताप नशाने आए।।
है भव्य भावना भाई, शुभ तीर्थंकर पद दायी।
हम सोलह कारण भाते, नत सादर शीश झुकाते।।2।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि–षोडशकारणेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

खण्डित पद हमने पाए, जग में रह भ्रमण कराए।
हम अक्षय अक्षत लाए, शास्वत पद पाने आए।।

है भव्य भावना भाई, शुभ तीर्थंकर पद दायी।
हम सोलह कारण भाते, नत सादर शीश झुकाते।।3।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि–षोडशकारणेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

भोगों ने हमें लुभाया, जग कीच के बीच फँसाया।
यह पुष्प चढ़ाने लाए, हम काम नशाने आए।।
है भव्य भावना भाई, शुभ तीर्थंकर पद दायी।
हम सोलह कारण भाते, नत सादर शीश झुकाते।।4।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि–षोडशकारणेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

व्यंजन कई सरस बनाते, निशदिन हम नये–नये खाते।
नैवेद्य दवा बन जावे, भव क्षुधा रोग नश जावे।।
है भव्य भावना भाई, शुभ तीर्थंकर पद दायी।
हम सोलह कारण भाते, नत सादर शीश झुकाते।।5।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि–षोडशकारणेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है मोह कर्म मतवाला, चेतन को कीन्हा काला।
हम दीप जलाकर लाए, हम मोह नशाने आए।।
है भव्य भावना भाई, शुभ तीर्थंकर पद दायी।
हम सोलह कारण भाते, नत सादर शीश झुकाते।।6।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि–षोडशकारणेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

मिल आठों कर्म सताए, जिससे हम चेत न पाए।
यह धूप जलाने लाए, हम कर्म नशाने आए।।
है भव्य भावना भाई, शुभ तीर्थंकर पद दायी।
हम सोलह कारण भाते, नत सादर शीश झुकाते।।7।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि–षोडशकारणेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

नश्वर फल जग के सारे, न कोई रहे हमारे।
फल सरस चढ़ाने लाए, मुक्ति पद पाने आए।।
है भव्य भावना भाई, शुभ तीर्थंकर पद दायी।
हम सोलह कारण भाते, नत सादर शीश झुकाते।।8।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि–षोडशकारणेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हम पद अनर्घ न पाए, आठों पृथ्वी भटकाए।
यह अर्घ्य बनाकर लाए, पाने अनर्घ पद आए।।
है भव्य भावना भाई, शुभ तीर्थंकर पद दायी।
हम सोलह कारण भाते, नत सादर शीश झुकाते।।9।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि-षोडशकारणेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोलह कारण भावना के अर्घ्य

(ताटंक छन्द)

मिथ्या भाव रहेगा जब तक, दृष्टि सम्यक् नहीं बने।
दरश विशुद्धि हो जाये तो, कर्म घातिया शीघ्र हने।।
तीर्थंकर पदवी के हेतु, सोलह कारण भाव कहे।
अर्घ्य समर्पित करते जिन पद, मेरे उर में भाव रहे।।1।।

ॐ ह्रीं सर्वदोषरहित दर्शनविशुद्धिभावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव-शास्त्र-गुरु के प्रति भक्ति, कर्म पाप का हरण करे।
दर्शन ज्ञान चरित उपचारिक, विनय भाव जो हृदय धरे।।
तीर्थंकर पदवी के हेतु, सोलह कारण भाव कहे।
अर्घ्य समर्पित करते जिन पद, मेरे उर में भाव रहे।।2।।

ॐ ह्रीं सर्वदोषरहित विनयसम्पन्नभावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नव कोटि से शील व्रतों का, निरतिचार पालन करता।
सुर नर किन्नर से पूजित हो, कोष पुण्य से वह भरता।।
तीर्थंकर पदवी के हेतु, सोलह कारण भाव कहे।
अर्घ्य समर्पित करते जिन पद, मेरे उर में भाव रहे।।3।।

ॐ ह्रीं सर्वदोषरहित अनतिचारशीलव्रतभावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर की ॐकार मय, दिव्य देशना है पावन।
नित्य निरन्तर ज्ञान योग से, भाता है जो मनभावन।।
तीर्थंकर पदवी के हेतु, सोलह कारण भाव कहे।
अर्घ्य समर्पित करते जिन पद, मेरे उर में भाव रहे।।4।।

ॐ ह्रीं सर्वदोषरहित अभीक्ष्णज्ञानोपयोग भावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्म और उसके फल में भी, हर्षभाव जिसको आवे।
सुत दारा धन का त्यागी हो, वह सुसंवेग भाव पावे।।
तीर्थंकर पदवी के हेतु, सोलह कारण भाव कहे।
अर्घ्य समर्पित करते जिन पद, मेरे उर में भाव रहे।।5।।

ॐ ह्रीं सर्वदोषरहित संवेगभावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वशक्ति को नहीं छिपाकर, त्याग भाव मन में लावे।
दान करे जो सत पात्रों में, त्याग शक्तिशः कहलावे।।
तीर्थंकर पदवी के हेतु, सोलह कारण भाव कहे।
अर्घ्य समर्पित करते जिन पद, मेरे उर में भाव रहे।।6।।

ॐ ह्रीं सर्वदोषरहित शक्तितस्त्यागभावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाह्याभ्यन्तर सुतप करे जो, निज शक्ति को प्रगटावे।
निज आतम की शुद्धि हेतु, सुतप शक्तिशः वह पावे।।
तीर्थंकर पदवी के हेतु, सोलह कारण भाव कहे।
अर्घ्य समर्पित करते जिन पद, मेरे उर में भाव रहे।।7।।

ॐ ह्रीं सर्वदोषरहित शक्तितस्तपभावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

साता और असाता पाकर, मन में समता उपजावे।
मरण समाधि सहित करे तो, साधु समाधि कहलावे।।
तीर्थंकर पदवी के हेतु, सोलह कारण भाव कहे।
अर्घ्य समर्पित करते जिन पद, मेरे उर में भाव रहे।।8।।

ॐ ह्रीं सर्वदोषरहित साधुसमाधिभावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

साधक तन से करे साधना, उसमें कोई बाधा आवे।
दूर करे अनुराग भाव से, वैयावृत्ति कहलावे।।
तीर्थंकर पदवी के हेतु, सोलह कारण भाव कहे।
अर्घ्य समर्पित करते जिन पद, मेरे उर में भाव रहे।।9।।

ॐ ह्रीं सर्वदोषरहित वैय्यावृत्तिभावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म घातिया अरि के नाशक, श्री जिन अर्हत् पद पावें।
दोषरहित उनकी भक्ति शुभ, अर्हत् भक्ति कहलावे।।
तीर्थंकर पदवी के हेतु, सोलह कारण भाव कहे।
अर्घ्य समर्पित करते जिन पद, मेरे उर में भाव रहे।।10।।

ॐ ह्रीं सर्वदोषरहित अर्हद्भक्तिभावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पञ्चाचार का पालन करते, दीक्षा देते शिवदायी।
उनकी भक्ति करना भाई, आचार्य भक्ति कहलाई।।
तीर्थंकर पदवी के हेतु, सोलह कारण भाव कहे।
अर्घ्य समर्पित करते जिन पद, मेरे उर में भाव रहे।।11।।

ॐ ह्रीं सर्वदोषरहित आचार्यभक्तिभावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुश्रुतधारी गुरु अनगारी, मुनि जिनसे शिक्षा पावें।
उपाध्याय की भक्ति करना, बहुश्रुत भक्ति कहलावे।।
तीर्थंकर पदवी के हेतु, सोलह कारण भाव कहे।
अर्घ्य समर्पित करते जिन पद, मेरे उर में भाव रहे।।12।।

ॐ ह्रीं सर्वदोषरहित बहुश्रुतभक्तिभावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वादशांग वाणी जिनवर की, द्रव्य तत्त्व को दर्शावे।
माँ जिनवाणी की भक्ति ही, प्रवचन भक्ति कहलावे।।
तीर्थंकर पदवी के हेतु, सोलह कारण भाव कहे।
अर्घ्य समर्पित करते जिन पद, मेरे उर में भाव रहे।।13।।

ॐ ह्रीं सर्वदोषरहित प्रवचनभक्तिभावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यत्नाचार सहित चर्या से, षट् आवश्यक पाल रहे।
आवश्यक अपरिहार्य भावना, मुनिवर स्वयं सम्हाल रहे।।
तीर्थंकर पदवी के हेतु, सोलह कारण भाव कहे।
अर्घ्य समर्पित करते जिन पद, मेरे उर में भाव रहे।।14।।

ॐ ह्रीं सर्वदोषरहित आवश्यकापरिहार्यभावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव वन्दना भक्ति महोत्सव, रथ यात्रा पूजा तप दान।
मोह-तिमिर का नाश प्रकाशक, ये ही धर्म प्रभावना मान।।
तीर्थंकर पदवी के हेतु, सोलह कारण भाव कहे।
अर्घ्य समर्पित करते जिन पद, मेरे उर में भाव रहे।।15।।

ॐ ह्रीं सर्वदोषरहित मार्गप्रभावनाभावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आर्य पुरुष त्यागी मुनिवर से, वात्सल्य का भाव रहे।
गाय और बछड़े सम प्रीति, प्रवचन वात्सल्य देव कहे।।
तीर्थंकर पदवी के हेतु, सोलह कारण भाव कहे।
अर्घ्य समर्पित करते जिन पद, मेरे उर में भाव रहे।।16।।

ॐ ह्रीं सर्वदोषरहित वात्सल्यभावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोलह कारण भाय भावना, तीर्थंकर पद पाते हैं।
अर्घ्य चढ़ाते भक्ति भाव से, उनके गुण को गाते हैं।।
तीर्थंकर पदवी के हेतु, सोलह कारण भाव कहे।
अर्घ्य समर्पित करते जिन पद, मेरे उर में भाव रहे।।17।।

ॐ ह्रीं सर्वदोषरहित दर्शनविशुद्धि आदि सोलहकारणभावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शान्तये शांतिधारा (दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

जयमाला

दोहा – अष्ट द्रव्य का अर्घ्य शुभ, दीपक लिया प्रजाल।
सोलह कारण भावना, की गाते जयमाल।।

(चौपाई)

काल अनादिनन्त बताया, इसका अन्त कहीं न पाया।
लोकालोक अनन्त कहाया, जिनवाणी में ऐसा गाया।।
जीव लोक में रहते भाई, इनकी संख्या कही न जाई।
जीवादि छह द्रव्यें जानो, सर्व लोक में इनको मानो।।

चतुर्गति में जीव भ्रमाते, कर्मोदय से सुख-दुःख पाते।
मिथ्यामति के कारण जानो, भ्रमण होय ऐसा पहचानो।।

उससे प्राणी मुक्ति पावें, जैन धर्म जो भी अपनावें।
प्राणी तीर्थंकर पद पाते, भव्य भावना जो भी भाते।।

सोलह कारण इसको जानो, प्रथम श्रेष्ठ आवश्यक मानो।
दर्श विशुद्धि जो कहलावे, सम्यक् दृष्टि प्राणी पावे।।

तो भी कोई काम न आवे, इसके बिना श्रेष्ठ सब पावे।
विनय भावना दूजी जानो, शील व्रतों का पालन मानो।।

ज्ञानोपयोग अभीक्ष्ण बताया, फिर संवेग भाव उपजाया।
शक्तितः शुभ त्याग बताया, तप धारण का भाव बनाया।।

साधु समाधि करें सद् ज्ञानी, वैयावृत्य भावना मानी।
अर्हद् भक्ति श्रेष्ठ बताई, है आचार्य भक्ति सुखदाई।।

आवश्यक अपरिहार्य जानिए, प्रवचन वत्सल श्रेष्ठ मानिए।
काल अनादि से कल्याणी, श्रेष्ठ भावना भाए प्राणी।।

हम भी यही भावना भाते, अपने मन में भाव बनाते।
विशद भावना हम ये भावें, फिर तीर्थंकर पदवीं पावें।।

अपने सारे कर्म नशाएँ, कर्म नाशकर शिवपुर जाएँ।
मुक्ति पद हम भी पा जावें, और नहीं अब जगत भ्रमावें।।

दोहा- सोलह कारण भावना, भाते योग सम्हाल।
भाव सहित हम वन्दना, करते विशद त्रिकाल।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि-षोडशकारणेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- शास्वत पद के हेतु हम, शास्वत सोलह भाव।
भाने को उद्धत रहें, करके कोई उपाव।।

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

पञ्चकल्याणक पूजा

(स्थापना)

तीन लोक में पूज्य बताए, पञ्चकल्याणक श्रेष्ठ महान्।
क्षोभहार आनन्द प्रदायक, तीन लोक में रहे प्रधान।।
पञ्चम गति की प्राप्ति हेतु हम, करते हैं उर में आह्वान।
विशद भावना यही हमारी, पाएँ अब पाँचों कल्याण।।

ॐ ह्रीं पंचकल्याणक समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं पंचकल्याणक समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं पंचकल्याणक समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(चाल छंद)

प्रासुक निर्मल नीर चढ़ाएँ, जन्म-जरादि रोग नशाएँ।
अपने हम सौभाग्य जगाएँ, सुख-शांति आनन्द बढ़ाएँ।।1।।

ॐ ह्रीं पञ्चकल्याणकेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अगुरु चन्दन श्रेष्ठ चढ़ाएँ, भवाताप से मुक्ति पाएँ।
अपने हम सौभाग्य जगाएँ, सुख-शांति आनन्द बढ़ाएँ।।2।।

ॐ ह्रीं पञ्चकल्याणकेभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय अक्षत यहाँ चढ़ाते, वही श्रेष्ठ अक्षय पद पाते।
अपने हम सौभाग्य जगाएँ, सुख-शांति आनन्द बढ़ाएँ।।3।।

ॐ ह्रीं पञ्चकल्याणकेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे पुष्प चढ़ा हर्षाएँ, काम वेदना पूर्ण नशाएँ।
अपने हम सौभाग्य जगाएँ, सुख-शांति आनन्द बढ़ाएँ।।4।।

ॐ ह्रीं पञ्चकल्याणकेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मिष्ठ यहाँ नैवेद्य चढ़ाएँ, क्षुधा नाश कर मुक्ति पाएँ।
अपने हम सौभाग्य जगाएँ, सुख-शांति आनन्द बढ़ाएँ।।5।।

ॐ ह्रीं पञ्चकल्याणकेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जलते दीप से आरति गाएँ, मोह अंध को पूर्ण नशाएँ।
अपने हम सौभाग्य जगाएँ, सुख-शांति आनन्द बढ़ाएँ।।6।।

ॐ ह्रीं पञ्चकल्याणकेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

खेकर धूप हर्ष को पाएँ, कर्म नाशकर मुक्ति पाएँ।
अपने हम सौभाग्य जगाएँ, सुख-शांति आनन्द बढ़ाएँ।।7।।

ॐ ह्रीं पञ्चकल्याणकेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल अर्पित कर हर्ष मनाएँ, मोक्ष महाफल हम पा जाएँ।
अपने हम सौभाग्य जगाएँ, सुख-शांति आनन्द बढ़ाएँ।।8।।

ॐ ह्रीं पञ्चकल्याणकेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट द्रव्य का अर्घ्य बनाए, पद अनर्घ्य पाने हम आए।
अपने हम सौभाग्य जगाएँ, सुख-शांति आनन्द बढ़ाएँ।।9।।

ॐ ह्रीं पञ्चकल्याणकेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पञ्चकल्याणक के अर्घ्य

कल्याणक शुभ पाँच जिन, पाते हैं तीर्थेश।
पुष्पाञ्जलि करते यहाँ, पाने को निज देश।।

मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

तीर्थंकर प्रकृति बन्ध जो, पूर्व भवों में करते जीव।
पाद मूल में तीर्थंकर के, पाते हैं वह पुण्य अतीव।।
माह पूर्व छह गर्भ से पहले, रत्न वृष्टिकर कर देव महान।
भक्ति भाव से प्रेरित होकर, विशद मनाते गर्भ कल्याण।।1।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा स्वर्गावतरणगर्भकल्याणकजिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारण स्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जन्म कल्याण मनाता आके, सौधर्मेन्द्र भक्ति के साथ।
निज परिवार सहित आकर के, प्रभु के चरण झुकाए माथ।।

पाण्डुक शिला पर मेरूगिरि की, न्हवन कराए जो शुभकार।
नृत्य गान करते खुश होकर, विशद करें सब जय-जयकार।।2।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा जन्माभिषेककल्याणजिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारण स्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाकर के कोई निमित्त शुभ, दीक्षा धारें जिन तीर्थेश।
पञ्च मुष्टि कर केश उखाड़ें, धारें स्वयं दिगम्बर भेष।।
संयम का अनुमोदन करते, लोकान्तिक भी देव महान।
भक्ति से प्रेरित हो सुर-नर, यहाँ मनाते तप कल्याण।।3।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा परिनिष्क्रमणकल्याणजिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारण स्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विशद साधना के द्वारा जिन, कर्म घातिया करें विनाश।
शुक्ल ध्यान एकत्व प्राप्त कर, करते केवलज्ञान प्रकाश।।
समवशरण की रचना करते, स्वर्ग से आकर देव महान।
पूजा अर्चा भक्ति करके, विशद मनाते ज्ञान कल्याण।।4।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा केवलज्ञानकल्याणजिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारण स्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवलज्ञान प्राप्त करते हैं, अतिशयकारी जिन भगवान।
अनुपम दिव्य देशना देकर, किया जगत का है कल्याण।।
शुद्ध ध्यान अग्नि में तपकर, अष्ट कर्म का किया विनाश।
मोक्ष प्राप्त करके अनुक्रम से, सिद्ध शिला पर कीन्हा वास।।5।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा निर्वाणकल्याणजिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारण स्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- जिन गुण सम्पत्ति स्वयं, पाये जिन भगवान।
पञ्च कल्याणक प्राप्त कर, पाते पद निर्वाण।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा पञ्चकल्याणक जिनगुणसम्पद्भ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

सोरठा– गाते हम जयमाल, कल्याणक शुभ पाँच की।
वन्दन मेरा त्रिकाल, कल्याणक मुझे प्राप्त हो।।

पद्धडि छंद

जो पुण्य करें जग में महान, पूरब भव में प्राणी प्रधान।
तीर्थंकर प्रकृति करें बन्ध, जीवन का पाते हैं आनन्द।।
कोई स्वर्ग–नर्क में करें वास, भोगों से रहते हैं उदास।
फिर वहाँ से करते हैं प्रयाण, पाते हैं पावन गर्भ कल्याण।।
कई देव वहाँ आते प्रधान, नगरी सज्जित करते महान।
छह माह पूर्व से नगर देश, शुभ रत्न वृष्टि करते विशेष।।
नव माह गर्भ का रहा काल, उस देश में होता है सुकाल।
फिर जन्म प्राप्त करते जिनेश, इन्द्रासन कंपित हो विशेष।।
ऐरावत लाता इन्द्रराज, शचि को भी लाता स्वयं साथ।
ले जाते पाण्डुक वन मझार, वहाँ मोद मनाते हैं अपार।।
फिर क्षीर नीर लाते सुदेव, सुर न्हवन कराते हैं सदैव।
श्रृंगार शचि करती प्रधान, शुभ दिव्य सामग्री ले महान।।
आनन्दोत्सव होता विशेष, जब जन्म प्रभु लेते जिनेश।
बालक बनके आते सुदेव, करते हैं क्रीड़ा साथ एव।।
ग्रहवास में रहकर के अपार, सुख शांति का हो नहीं पार।
फिर मिलता है कोई निमित्त, हो उदासीन प्रभु का सुचित्त।।
लौकान्तिक आकर के प्रधान, सम्बोधन करते हैं महान।
सुरपति हर्षित हों वहाँ आन, वह श्रेष्ठ मनाएँ तप कल्याण।।
शुभ केश लुंच करते अपार, प्रभु पञ्च मुष्टि चारित्र धार।
प्रभु करें घातिया कर्म नाश, कैवल्य ज्ञान करते प्रकाश।।
सुर समवशरण रचना सुएव, आकर मिल करते महत देव।

प्रभु गगन में करते हैं विहार, पग तल पंकज रचते अपार।।
फिर करें प्रभु जी योग रोध, अन्तर में आता स्वयं बोध।
फिर कर्म अघाति कर विनाश, चेतन का तन से होय ह्रास।।
प्रभु लोक शिखर पर करें वास, निज का निज में करते प्रकाश।
वहाँ इन्द्र सभी आते प्रधान, मिल सभी मनाते मोक्ष कल्याण।।
प्रभु जन्म मरण का कर विनाश, शुभ मोक्ष महल में करें वास।
मेरे मन में है यही आश, अब विशद ज्ञान का हो प्रकाश।।

दोहा– जिन गुण सम्पत्ति प्रभु, पाते श्रेष्ठ महान।
विशद ज्ञान धारी बनें, पाएँ पञ्च कल्याण।।

ॐ ह्रीं पंचमहाकल्याणकजिनगुणसम्पदे जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– पञ्च कल्याणक की सभी, पूजा करें सदैव।
सुख शांति सौभाग्य के, फल दाता जिनदेव।।

इत्याशीर्वादः

प्रातिहार्य पूजा

(स्थापना)

अष्ट प्रातिहार्यों की पूजन, भाव सहित करते शुभकार।
जिनगुण सम्पत्ति व्रत करते, प्राणी जो भी मंगलकार।।
व्रत करने वाले जिनगुण सम्पद, पाते हैं शुभ विशद महान।
जिनगुण सम्पद् को हम करते, हृदय कमल में अब आह्वान।।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पद् ! अत्र अवतर–अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पद् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पद् ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(दोहा)

भर लाए हम कलश में, प्रासुक करके नीर।
जन्म–जरादि नाशकर, पाने भव का तीर।।1।।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पद्भ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

घिस लाए चन्दन यहाँ, हम केसर के साथ।
मिटे विभव संताप मम, हे त्रिभुवन के नाथ।।2।।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पद्भ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय धोये यह धवल, पूजा हेतु महान।
अक्षय पद हो प्राप्त शुभ, करते हम गुणगान।।3।।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पद्भ्यः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

केसर से चावल रंगे, पुष्प बनाए आज।
कामबाण को नाशकर, पाएँ मोक्ष स्वराज।।4।।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पद्भ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

चढ़ा रहे नैवेद्य हम, भरकर के यह थाल।
क्षुधा रोग का नाश हो, नाथ मेरा हर हाल।।5।।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पद्भ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजा करने को यहाँ, दीपक लिया प्रजाल।
मोह अंध का नाश हो, मेरा नाथ त्रिकाल।।6।।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पद्भ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप जलाते आज हम, करने कर्म विनाश।
पूजा करते भाव से, पाने मुक्ति वास।।7।।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पद्भ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

चढ़ा रहे हैं फल यहाँ, होय मोक्षफल प्राप्त।
शास्वत पद अब प्राप्त हो, हमको अब हे आप्त।।8।।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पद्भ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट द्रव्य का हम यहाँ, चढ़ा रहे हैं अर्घ्य।
मुक्ति पथ की आस ले, पाने सुपद अनर्घ्य।।9।।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पद्भ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा– प्रातिहार्य पाते प्रभु, तीर्थंकर जिनदेव।
पुष्पाञ्जलि करते यहाँ, पाने निज पद एव।।

(मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

(सोरठा)

तरु अशोक सुखदाय, शोक निवारी जानिए।
प्रातिहार्य कहलाय, समवशरण की सभा में।।1।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अशोकवृक्षमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ सिंहासन होय, रत्न जड़ित सुंदर दिखे।
अधर तिष्ठते सोय, उदयाचल सों छवि दिखे।।2।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सिंहासनमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पवृष्टि शुभ होय, भांति–भांति के कुसुम से।
महा भक्तिवश सोय, मिलकर करते देव गण।।3।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सुरपुष्पवृष्टिमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिव्य ध्वनि सुखकार, सुने पाप क्षय हो भला।
पावै सौख्य अपार, सुर नर पशु सब जगत के।।4।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा दिव्यध्वनिमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौंसठ चंवर ढुराय, प्रभु के आगे देवगण।
भक्ति सहित गुण गाय, अतिशय महिमा प्रकट हो।।5।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा चामरमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्त सुभव दर्शाय, भामण्डल निज कांति से।
महा ज्योति प्रगटाय, कोटि सूर्य फीके पड़ें।।6।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा भामण्डलमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव दुंदुभि नाद, करें देव मिलकर सुखद।
करें नहीं उन्माद, समवशरण में जाय के।।7।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा देवदुंदुभिमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़ित सुनग तिय छत्र, तीन लोक के प्रभु की।
दर्शाते सर्वत्र, महिमाशाली है कहा।।8।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा छत्रत्रयमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– प्रातिहार्य वसु हों प्रकट, अर्हन्तों के खास।
जिनगुण वैभव के धनी, करते शिवपुर वास।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अष्ट महाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पद्भ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा– प्रातिहार्य पाते प्रभु, पाकर केवलज्ञान।
जयमाला गाते यहाँ, पाने सौख्य महान।।

(शम्भू छंद)

भव्य जीव संयम धारण कर, क्रमशः करते कर्म विनाश।
वह संसार भ्रमण करते हैं, जो होते कर्मों के दास।।
क्षायिक श्रेणी चढ़ने वाले, करते कर्म घातिया नष्ट।
अनुपम अतिशय पाने वाले, प्रातिहार्य पाते हैं अष्ट।।
समवशरण की रचना होती, वाद्य बजाते आकर देव।

पुष्पवृष्टि होती है अनुपम, जय-जय होता नाद सदैव।।
दिव्य देशना पाते अनुपम, आकर तीन गति के जीव।
भक्ति अर्चा करके वह भी, प्राप्त करें शुभ पुण्य अतीव।।
बारह सभा में आकर प्राणी, जिनवाणी का करें श्रवण।
प्रथम कोष्ठ में आकर बैठें, गणधर आदि श्रेष्ठ श्रमण।।
द्वितीय से पञ्चम कोठे तक, रहे देवियों के स्थान।
छठवें से दशमें कोठे तक, चउ निकाय के देव महान।।
चक्रवर्ति आदि मानव का, ग्यारहवें में है स्थान।
बारहवें कोठे में आकर, पशु बैठते सभी प्रधान।।
तरु अशोक है शोक निवारी, दुन्दुभि बजती मंगलकार।
सिंह वृत्ति के धारी हैं जिन, सिंहासन होता शुभकार।।
तीन छत्र सूचित करते शुभ, तीन लोक के नाथ जिनेश।
दिव्य ध्वनि खिरती हैं प्रभु की, भामण्डल भी रहा विशेष।।
यक्ष ढ़ोरते चँवर सुचौंसठ, महिमा जो दर्शाते श्रेष्ठ।
पुष्पवृष्टि होती है अनुपम, भव्य जीव फल पाएँ यथेष्ट।।

(छन्द घत्ता)

जय-जय जिन स्वामी, त्रिभुवननामी तीन काल के तुम ज्ञाता।
जय अन्तर्यामी, शिवपदगामी, तीन लोक के हो त्राता।।
जय-जय उपकारी हे अनगारी, संयम धारी अनगारी।
जय-जय अविकारी, गगन बिहारी, प्रातिहार्य धर ब्रह्मचारी।।

ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पद्भ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– भव्य जीव पूजा करें, प्रातिहार्य की आन।
कर्म घातिया नाश कर, पावें केवल ज्ञान।।

इत्याशीर्वादः

जन्म के दस अतिशय पूजा

(स्थापना)

तीर्थंकर प्रकृति के बन्धक, जन्म के दश अतिशय पाते।
जन्म जहाँ पाते हैं प्रभु जी, इन्द्र भक्ति से कई आते।।
जन्म के अतिशय का करते हैं, आज यहाँ पर हम गुणगान।
विशद भाव से विशद हृदय में, करते हैं हम भी आह्वान।।

ॐ ह्रीं अर्हं दशसहजातिशय जिनगुणसम्पद् समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं अर्हं दशसहजातिशय जिनगुणसम्पद् समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं अर्हं दशसहजातिशय जिनगुणसम्पद् समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(चौपाई छंद)

क्षीरोदधि का नीर चढ़ाएँ, जन्मादि के रोग नशाएँ।
पूजा कर सौभाग्य जगाएँ, मोक्ष मार्ग पर कदम बढ़ाएँ।।1।।

ॐ ह्रीं दशसहजातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल चंदन घिसकर लाए, भव संताप नशाने आए।
पूजा कर सौभाग्य जगाएँ, मोक्ष मार्ग पर कदम बढ़ाएँ।।2।।

ॐ ह्रीं दशसहजातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय श्रेष्ठ चढ़ाते भाई, अक्षय पद दायक सुखदाई।
पूजा कर सौभाग्य जगाएँ, मोक्ष मार्ग पर कदम बढ़ाएँ।।3।।

ॐ ह्रीं दशसहजातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प चढ़ाते हम शुभकारी, कामबाण का नाशकहारी।
पूजा कर सौभाग्य जगाएँ, मोक्ष मार्ग पर कदम बढ़ाएँ।।4।।

ॐ ह्रीं दशसहजातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

यह नैवेद्य सरस मनहारी, क्षुधा रोग नाशक शुभकारी।
पूजा कर सौभाग्य जगाएँ, मोक्ष मार्ग पर कदम बढ़ाएँ।।5।।

ॐ ह्रीं दशसहजातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत के दीप यहाँ प्रजलाए, मोह नाश के भाव बनाए।
पूजा कर सौभाग्य जगाएँ, मोक्ष मार्ग पर कदम बढ़ाएँ।।6।।

ॐ ह्रीं दशसहजातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः मोहान्धकारविनाशनायं दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप सुगन्धित यहाँ जलाएँ, मोक्ष महल में धाम बनाएँ।
पूजा कर सौभाग्य जगाएँ, मोक्ष मार्ग पर कदम बढ़ाएँ।।7।।

ॐ ह्रीं दशसहजातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजा में फल श्रेष्ठ चढ़ाएँ, मोक्ष सुफल पा शिवपुर जाएँ।
पूजा कर सौभाग्य जगाएँ, मोक्ष मार्ग पर कदम बढ़ाएँ।।8।।

ॐ ह्रीं दशसहजातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य चढ़ाकर पूज रचाएँ, पद अनर्घ पाके हर्षाएँ।
पूजा कर सौभाग्य जगाएँ, मोक्ष मार्ग पर कदम बढ़ाएँ।।9।।

ॐ ह्रीं दशसहजातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- दस अतिशय जिनराज के, जन्म समय हों खास।
पुष्पाञ्जलि करते यहाँ, पाने शिवपुर वास।।

(मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दश अतिशय जनमत जिन पाय, पूजत सुर नर हर्ष मनाय।
स्वेद रहित जिनवर तन पाय, उन जिन पद हम अर्घ्य चढ़ाय।।1।।

ॐ हां हीं हूं हौं ह्रः असिआउसा निःस्वेदत्वसहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मल नहिं होय प्रभु तन मांहि, निर्मल रही देह सुख दाय।
जन्म लेत यह अतिशय पाय, उन जिन पद हम अर्घ्य चढ़ाय।।2।।

ॐ हां हीं हूं हौं ह्रः असिआउसा निर्मलत्वसहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम चतुष्क संस्थान जो पाय, हीनाधिक तन होवे नाय।
जन्म लेत यह अतिशय पाय, उन जिन पद हम अर्घ्य चढ़ाय।।3।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा समचतुरस्त्रसंस्थान सहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संहनन वज्र वृषभ जो होय, अद्भुत शक्ति धारे सोय।
जन्म लेत यह अतिशय पाय, उन जिन पद हम अर्घ्य चढ़ाय।।4।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा वज्रवृषभनाराचसंहनन सहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परम सुगंधित पाते देह, भव्य जीव सब पावें स्नेह।
जन्म लेत यह अतिशय पाय, उन जिन पद हम अर्घ्य चढ़ाय।।5।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सौगन्ध्यसहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अतिशयकारी सुंदर रूप, फीके पड़ें जगत् के भूप।
जन्म लेत यह अतिशय पाय, उन जिन पद हम अर्घ्य चढ़ाय।।6।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा रूपसहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लक्षण एक सहस हैं आठ, सहस नाम जो पढ़ते पाठ।
जन्म लेत यह अतिशय पाय, उन जिन पद हम अर्घ्य चढ़ाय।।7।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सौलक्षण्य सहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्वेत रक्त प्रभु के तन होय, वात्सल्य महिमा युत सोय।
जन्म लेत यह अतिशय पाय, उन जिन पद हम अर्घ्य चढ़ाय।।8।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा श्वेतरक्तसहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हित मित प्रिय वचन सुखदाय, सुनकर हर प्राणी सुख पाय।
जन्म लेत यह अतिशय पाय, उन जिन पद हम अर्घ्य चढ़ाय।।9।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा प्रियहितवादित्वसहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बल अतुल्य पाये जिनदेव, जग के जीव करें पद सेव।
जन्म लेत यह अतिशय पाय, उन जिन पद हम अर्घ्य चढ़ाय।।10।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अप्रमितवीर्यसहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– जन्म समय भगवान के, दश अतिशय शुभकार।
होते हैं यह जानिए, पावन मंगलकार।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा दशसहजातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा– दश अतिशय पाते प्रभु, स्वयं जन्म के साथ।
जयमाला गाते यहाँ, चरण झुकाकर माथ।।

(छन्द : कुसुमलता)

पूर्व पुण्य के प्रबल योग से, जिनवर पाते गर्भ कल्याण।
देहमंत तीर्थंकर जिन के, दश अतिशय हैं सहज महान।।
गर्भ के साथ देह में भाई, अतिशय रहते अपरम्पार।
होते हैं संस्कार अलौकिक, जिनगुण धारी के शुभकार।।
अतिशय रूप प्राप्त करते प्रभु, तीन लोक में अतिशयकार।
श्रेष्ठ सुगन्धित तन पाते हैं, सर्व जहाँ में मंगलकार।।
स्वेद रहित तन पाते जिनवर, सब जीवों में रहा प्रधान।
मूत्र और मल से विरहित तन, पाते तीर्थंकर भगवान।।
हित–मित–प्रिय वाणी है जिनकी, करते भव्यों का कल्याण।
वीर्यानन्त के धारी जिनवर, जिनके बल का नहीं प्रमाण।।
श्वेत रुधिर पाते हैं तन में, विस्मयकारी क्षीर समान।

एक हजार आठ लक्षण शुभ, जिनका करें कौन गुणगान।।
जन्म के अतिशय कहलाए यह, इनकी महिमा का न पार।
जो भी इनकी अर्चा करते, धर्म का हो उनके संचार।।
अतिशय का गुणगान करें जो, वह भी अतिशय पाते हैं।
निज के गुण में वृद्धि करके, निज सौभाग्य जगाते हैं।।
जिन गुण पाने की अनुपम जो, विशद भावना भाते हैं।
यह संसार असार छोड़कर, शिव नगरी को जाते हैं।।
श्री जिनेन्द्र के गुण पाने को, चरण शरण में आये हैं।
बने मोक्ष पथ के राही हम, यही भावना भाये हैं।।

दोहा– दश बतलाए जन्म के, अतिशय श्रेष्ठ महान।
पाने को अतिशय महा, करते हम गुणगान।।

ॐ ह्रीं जन्मसम्बन्धि दशसहजातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– पुष्पाञ्जलि करते यहाँ, दश अतिशय की आज।
जिन अर्चा करता यहाँ, आके सकल समाज।।

इत्याशीर्वादः

ज्ञान के अतिशय पूजा

(स्थापना)

केवलज्ञान प्रकट होने पर, दस अतिशय पाते भगवान।
सौ–सौ इन्द्र चरण में आकर, भक्ति से करते गुणगान।।
हृदय कमल के सिंहासन पर, करते हैं हम आह्वानन।
विशद भाव से श्रीचरणों में, करते हैं शत्–शत् वंदन।।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पद् समूह ! अत्र अवतर–अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पद् समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पद् समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(शम्भू छंद)

मन का मैल मिटा ना मेरा, नश्वर तन यह धोया है।
निज वैभव पाने की आशा, में जीवन यह खोया है।।
ये जीवन सफल बनाने को, हे नाथ शरण में आये हैं।
मुक्ति पथ पाने हे जिनवर, हम चरणों में सिर नाए हैं।।1।।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः जन्म–जरा–मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

यह तन मन शीतल किया मगर, चेतन शीतल न हो पाया।
संसार ताप के नाश हेतु जग, मृग–तृष्णा में भटकाया।।
ये जीवन सफल बनाने को, हे नाथ शरण में आये हैं।
मुक्ति पथ पाने हे जिनवर, हम चरणों में सिर नाए हैं।।2।।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

हम लाख चौरासी योनि में यूँ, बार–बार भटकाए हैं।
कर्मों के बंधन पड़े विकट, हम मुक्त नहीं हो पाए हैं।।
ये जीवन सफल बनाने को, हे नाथ शरण में आये हैं।
मुक्ति पथ पाने हे जिनवर, हम चरणों में सिर नाए हैं।।3।।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

काया की माया में उलझे, हम सारे जग में भटकाए।
भोगों की आशा को मन से, हे नाथ मिटाने को आए।।
ये जीवन सफल बनाने को, हे नाथ शरण में आये हैं।
मुक्ति पथ पाने हे जिनवर, हम चरणों में सिर नाए हैं।।4।।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नश्वर काया की पुष्टि को, हमने कई चरु शुभ खाए हैं।
जीवन पर जीवन बिता दिए, संतुष्ट नहीं हो पाए हैं।।
ये जीवन सफल बनाने को, हे नाथ शरण में आये हैं।
मुक्ति पथ पाने हे जिनवर, हम चरणों में सिर नाए हैं।।5।।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाहर का तिमिर मिटाने को, सब नश्वर दीप जलाते हैं।
अन्तर का तिमिर मिटाने को, नर धर्म शरण में जाते हैं।।
ये जीवन सफल बनाने को, हे नाथ शरण में आये हैं।
मुक्ति पथ पाने हे जिनवर, हम चरणों में सिर नाए हैं।।6।।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः मोहान्धकारविनाशनायं दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

हम धूप जलाते रहे मगर यह, कर्म नहीं जल पाए हैं।
चेतन की याद भुलाकर के हम, बार-बार पछताए हैं।।
ये जीवन सफल बनाने को, हे नाथ शरण में आये हैं।
मुक्ति पथ पाने हे जिनवर, हम चरणों में सिर नाए हैं।।7।।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल खाये हमने कई मगर, चेतन फल का न रस पाया।
अब शक्ति पाने चेतन की, फल यह चरणों में ले आया।।
ये जीवन सफल बनाने को, हे नाथ शरण में आये हैं।
मुक्ति पथ पाने हे जिनवर, हम चरणों में सिर नाए हैं।।8।।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों की शक्ति के कारण, ना पद अनर्घ हमने पाया।
शुभ अर्घ्य बनाकर चरणों में, यह दास चढ़ाने को लाया।।
ये जीवन सफल बनाने को, हे नाथ शरण में आये हैं।
मुक्ति पथ पाने हे जिनवर, हम चरणों में सिर नाए हैं।।9।।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- अतिशय केवल ज्ञान के, दश हैं मंगलकार।
पुष्पाञ्जलि कर पूजके, भवदधि पावें पार।।

(मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

अथ प्रत्येक अर्घ्य

(अडिल्ल छंद)

अतिशय जिनवर केवलज्ञान के दश कहे।
योजन शत् इक में सुभिक्षता ही रहे।
केवलज्ञान का अतिशय जिनवर पाए हैं।
सुर नर पशु चरणों में शीष झुकाए हैं।।1।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा गव्यूतिशतचतुष्टय सुभिक्षत्व घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवल ज्ञानी होय, गमन नभ में करें।
प्रभु चले जिस ओर, देवगण अनुसरें।
केवलज्ञान का अतिशय जिनवर पाए हैं।
सुर नर पशु चरणों में शीष झुकाए हैं।।2।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा गगन गमनत्व घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर का हो गमन, सदा हितदाय जी।
तिस थानक नहिं, कोय मारने पाय जी।।
केवलज्ञान का अतिशय जिनवर पाए हैं।
सुर नर पशु चरणों में शीष झुकाए हैं।।3।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अप्राणिवधत्व घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर नर पशु जड़ कृत उपसर्ग चउ कहे।
इनकी बाधा प्रभु के ऊपर नहीं रहे।
केवलज्ञान का अतिशय जिनवर पाए हैं।
सुर नर पशु चरणों में शीष झुकाए हैं।।4।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा उपसर्गाभाव घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षुधा आदि की पीड़ा से जग दु:ख सह्यो।
सो जिन कवलाहार जान सब पर-हर्‌यो।
केवलज्ञान का अतिशय जिनवर पाए हैं।
सुर नर पशु चरणों में शीष झुकाए हैं।।5।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा भुक्त्यभाव घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण में श्री जिनवर स्थित रहे।
पूर्व दिशा मुख होय चतुर्दिक दिख रहे।।
केवलज्ञान का अतिशय जिनवर पाए हैं।
सुर नर पशु चरणों में शीश झुकाए हैं।।6।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा चतुर्मुखत्व घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राकृत संस्कृत सकल देश भाषा कही।
सब विद्या अधिपत्य सकल जानत सही।
केवलज्ञान का अतिशय जिनवर पाए हैं।
सुर नर पशु चरणों में शीष झुकाए हैं।।7।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वविद्येश्वर घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मूर्तिक तन पुद्‌गल अणु से बन रह्यो।
पड़े नहीं छाया, महा अचरज भयो।
केवलज्ञान का अतिशय जिनवर पाए हैं।
सुर नर पशु चरणों में शीष झुकाए हैं।।8।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अच्छायत्व घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर के नख केश, नाहिं वृद्धि करें।
ज्यों के त्यों ही रहें, प्रभु यह गुण धरें।

केवलज्ञान का अतिशय जिनवर पाए हैं।
सुर नर पशु चरणों में शीष झुकाए हैं।।9।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा समाननखकेशत्व घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नेत्रों में टिमकार, केश भौं नहिं हिलें।
दृष्टि नाशा रहे, कोई हेतु मिलें।
केवलज्ञान का अतिशय जिनवर पाए हैं।
सुर नर पशु चरणों में शीष झुकाए हैं।।10।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अपक्ष्मस्पंदत्व घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- अतिशय पाते ज्ञान के, जगती पति जगदीश।
भक्ति भाव से भक्तजन, चरण झुकाते शीश।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पद्‌भ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा- कर्म घातिया नाशकर, पाए केवलज्ञान।
जयमाला गाते यहाँ, दश अतिशय की आन।।

(चौपाई : शांतिनाथ मुख....)

नाथ आप त्रिभुवन के स्वामी, महानन्द कर्त्ता अभिरामी।
वान भवन ज्योतिष के वासी, देव कहे जो कल्प निवासी।।1।।
सबही तुमको ध्याने वाले, भावसहित गुण गाने वाले।
इन्द्र नरेन्द्र शरण में आते, पद में सादर शीश झुकाते।।2।।
गणधरादि भी तुमको ध्याते, भावसहित तुमरे गुण गाते।
तुम हो मोह कर्म के नाशी, अतिशय केवलज्ञान प्रकाशी।।3।।

चारों गति हमने दुःख पाए, हे प्रभु ! उनसे हम घबड़ाए।
दुःख नरक में प्राणी पावें, इस मुख से जो कहे न जावें।।4।।
बध बंधन आदि भयकारी, पशु गति में दुःख होते भारी।
राग बढ़ा मानुष गति पाए, जाने कितने स्वप्न सजाए।।5।।
इच्छाओं ने हमको घेरा, कहा सभी को मेरा-मेरा।
मानस दुःख सुरगति में पाए, धैर्य रहित ये जगत भ्रमाए।।6।।
मिथ्यामति उदय में आई, रत्नत्रय निधि हमें न भायी।
भाग्य उदय में मेरा आया, प्रभु आपका दर्शन पाया।।7।।
तुमने भेद ज्ञान प्रगटाया, उत्तम संयम को भी पाया।
कर्म घातिया आप नशाए, पावन केवलज्ञान जगाए।।8।।
दश अतिशय पाये शुभकारी, जिनकी महिमा जग से न्यारी।
जीवों को सुख देने वाले, सारे जग में रहे निराले।।9।।
हो सुभिक्ष सौ योजन भाई, अदयावान रही प्रभुताई।
चतुर्दिशा दर्शन शुभकारी, होते हैं उपसर्ग निवारी।।10।।
कवलाहार रहित जिन स्वामी, गगन गमन करते जगनामी।
सब विद्या के ईश्वर गाये, छाया रहित प्रभु तन पाए।।11।।
नख अरु केश न बढ़ते भाई, अनिमिश दृग पाते सुखदायी।
हम भी यह अतिशय प्रगटाएँ, विशद ज्ञान पा शिवपद पाएँ।।12।।

सोरठा- 'विशद' ज्ञान के साथ, दश अतिशय पाए प्रभु।
चरण झुकाएँ माय, तुमसा बनने के लिए।।

ॐ ह्रीं घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- अतिशय केवलज्ञान के, पाए जिन तीर्थेश।
शिवपथ के राही बने, धार दिगम्बर भेष।।

इत्याशीर्वादः

देवकृत अतिशय पूजा

(स्थापना)

चौदह अतिशय देवकृत, पाते जिन भगवान।
जिसकी महिमा का यहाँ, कर न सके बखान।।
ऐसे श्री जिनेन्द्र का, हृदय करें आह्वान।
पूजा भक्ति अर्चना, से करते गुणगान।।
जिनवर के आशीष से, सफल होय हर कार्य।
मुक्ति पावे जीव हर, बनकर के शुभ आर्य।।

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पद् समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पद् समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पद् समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(नंदीश्वचर की चाल)

गंगा नदी का शुचि नीर, कलश में भर लाए।
पाने भवदधि का तीर, जिन पद में आए।।
हम पूज रहे तव पाद, मेरे पाप कटें
अनुक्रम से हे भगवान, मेरे कर्म घटें।।1।।

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभित ये गंध अनूप, घिसकर के लाए।
पा जाएँ निज स्वरूप, पूजा को आए।।
हम पूज रहे तव पाद, मेरे पाप कटें।
अनुक्रम से हे भगवान, मेरे कर्म घटें।।2।।

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत ये धवल महान, धोकर के लाए।
अक्षय पद हे भगवान, पाने को आए।।

हम पूज रहे तव पाद, मेरे पाप कटें
अनुक्रम से हे भगवान, मेरे कर्म घटें।।3।।

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

फूलों में भरा सुवास, चउ दिश महकाए।
हो कामबाण का नाश, अर्चा को लाए।।
हम पूज रहे तव पाद, मेरे पाप कटें।
अनुक्रम से हे भगवान, मेरे कर्म घटें।।4।।

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे सुरभित पकवान, हमने बनवाए।
हो क्षुधा रोग की हान, चढ़ाने को लाए।।
हम पूज रहे तव पाद, मेरे पाप कटें।
अनुक्रम से हे भगवान, मेरे कर्म घटें।।5।।

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लाये यह दीप प्रजाल, जग-मग ज्योति चले।
अब नशे मोह का जाल, कर्म का पुञ्ज जले।।
हम पूज रहे तव पाद, मेरे पाप कटें।
अनुक्रम से हे भगवान, मेरे कर्म घटें।।6।।

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः मोहान्धकारविनाशनायं दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

खेते अग्नि में धूप, अनुपम गंध मयी।
अनुपम जो रही अनुप, आठों कर्म क्षयी।।
हम पूज रहे तव पाद, मेरे पाप कटें।
अनुक्रम से हे भगवान, मेरे कर्म घटें।।7।।

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे फल विविध प्रकार, थाली भर लाए।
अब शिव रमणी का प्यार, पाने को आए।।

हम पूज रहे तव पाद, मेरे पाप कटें।
अनुक्रम से हे भगवान, मेरे कर्म घटें।।8।।

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों द्रव्यों से अर्घ्य, बनाकर के लाए।
पाने को सुपद अनर्घ्य, चढ़ाने को आए।।
हम पूज रहे तव पाद, मेरे पाप कटें।
अनुक्रम से हे भगवान, मेरे कर्म घटें।।9।।

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- चौदह अतिशय देवकृत, पाते हैं भगवान।
चरण शरण को प्राप्त कर, करें विशद गुणगान।।

(मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

अथ प्रत्येक अर्घ्य

अतिशय देवों कृत कहे, चौदह सर्व महान्।
सर्व जीव को सुख करे, अर्धमागधी बान।।1।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वार्धमागधीय भाषा देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जीवों में मैत्री रहे, जहँ जिन की थिति होय।
देव निमित्तक जानिए, अतिशय जिनके जोय।।2।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्व जीव मैत्रीभाव देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फूल फलें षट् ऋतु के, जहँ जिन की थिति होय।
देवों का तो निमित्त है, अतिशय जिनका सोय।।3।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वर्तुफलादि तरु परिणाम देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्पणवत् भूमी रहे, जहँ जिन करें विहार।
अतिशय देवों कृत रहा, होय मंगलाचार।।4।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा आदर्शतल प्रतिमा रत्नमही देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंद सुगंधित शुभ सुखद, पुनि-पुनि चले बयार।
अतिशय श्री जिनदेव का, करता मंगलकार।।5।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सुगंधित विहरण मनुगत वायुत्व देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व जीव आनंदमय, होवे मंगलकार।
अतिशय होवे यह परम, प्रभु का होय विहार।।6।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वानंद कारक देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अतिशय से जिनदेव के, भूगत कंटक होय।
ये अतिशय भी जहाँ में, देव निमित्तक सोय।।7।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा वायुकुमारोपशमित धूलि कंटकादि देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गंधोदक की वृष्टि हो, अतिशय करते देव।
महिमा यह जिनदेव की, सेवा करें सदैव।।8।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा मेघकुमार कृत गंधोदक वृष्टि देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव रचें पद तल कमल, गगन गमन जब होय।
अतिशय श्री जिनदेव का, देव निमित्तक सोय।।9।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा चरण कमल तल रचित स्वर्ण कमल देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुखकारी सब जीव को, निर्मल दिश आकाश।
देव करें भक्ति विमल, अतिशय जिन सुख राश।।10।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा गगन निर्मल देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धूम मेघ वर्जित सुभग, सब दिश निर्मल होय।
देव करें भक्ति परम, अतिशय जिन को जोय।।11।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्व दिशा निर्मल देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्ति के वश देव शुभ, करते जय-जयकार।
पृथ्वी से आकाश तक, होवे मंगलकार।।12।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा आकाशे जय-जयकार देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वाण्ह यक्ष आगे चले, धर्म चक्र धर शीष।
अतिशय श्री जिनदेव का, चरण झुकें शत् ईश।।13।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा धर्म चक्र चतुष्टय देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंगल द्रव्य वसु देवगण, लेकर चलते साथ।
अतिशय कर सुर नर सभी, चरण झुकाते माथ।।14।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अष्ट मंगल द्रव्य देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- चौदह अतिशय देवकृत, होते अपरम्पार।
भक्ति का फल यह विशद, मिले मोक्ष का द्वार।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा- देवों द्वारा पूज्य हैं, जिनके चरण त्रिकाल।
चौदह अतिशय वान की, गाते हम जयमाल।।

(पद्धरि छन्द)

जय-जय त्रिभुवनपति तीर्थ नाथ, तव भक्त झुकाते चरण माथ।
तुमने पाया केवल्य ज्ञान, तीनों लोकों में जो महान।।

तव देव चरण में झुकें आन, सब करें भक्ति से यशोगान।
जिसकी महिमा का नहीं पार, चरणों में झुकते बार-बार।।
दश जन्म समय अतिशय जिनेश, पाते हैं अनुपम जो विशेष।
प्रभु पाते जब केवल्य ज्ञान, तब अतिशय होते दश महान।।
चौदह अतिशय शुभ करें देव, भक्ति से नत होकर सदैव।
वसु प्रातिहार्य होते महान, प्रभु के आगे जग में प्रधान।।
शुभ अनन्त चतुष्टय करें प्राप्त, फिर बन जाते हैं प्रभु आप्त।
शुभ समवशरण पावन विशाल, सुर रचना करते विनत भाल।।
शुभ कमलासन राजें जिनेश, चउ अंगुल अधरासन विशेष।
प्रभु वैभव पाते हैं अपार, उसमें ना लाते हैं विकार।।
कल्याणक पाँचों पा प्रधान, महिमा का होता नहीं गान।
शुभ दिव्य देशना हेतु नेक, प्राणी आते जग के अनेक।।
कोई अभव्य मिथ्यात्ववान, द्रोही संदिग्ध विपर्यय ज्ञान।
कोठों में इनका नहीं वास, क्षुत्तृष्णा का हो रहा ह्रास।।
न होय कभी आंतक रोग, न कलह वैर न हो वियोग।
कामादि बाधा नहीं होय, बैरी भी मन का बैर खोय।।
इक हस्त उच्च सीढ़ी सुजान, सब बीस सहस्र जानो प्रमाण।
हो बाल वृद्ध पंगु विशेष, अन्तर्मुहूर्त्त में कर प्रवेश।।
अभिमानी मानस्तम्भ देख, मद गालित होते हैं विशेष।
सम्यक्त्व निधि पाते महान, जिनवाणी सुनते वहाँ आन।।
सब प्राणी बनते पुण्यवान, होते हैं बहुगुण के निधान।
कर्मों का खण्डन करें आन, चेतन के गुण का करें भान।।
जिनगुण सम्पत्ति जो प्रधान, त्रेसठ गुण पाते हैं महान।
फिर आत्म सुधारस करे पान, क्रमशः पाते हैं विशद ज्ञान।।

है मेरा अन्तिम यही भाव, व्रत संयम में मम बढ़े चाव।
सम्यक् दर्शन सद्ज्ञान प्राप्त, चारित्र पाकर के बने आप्त।।

दोहा- जिनगुण सम्पत्ति प्राप्त कर, बने मुक्ति के ईश।
वह निधि पाने के लिए, चरण झुकाते शीश।।

ॐ ह्रीं देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पद्भ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- जिनगुण सम्पत्ति 'विशद', पाने आए आज।
व्रत संयम को प्राप्त कर, पाएँ शिवपुर राज।।

इत्याशीर्वादः

जाप-ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः।

समुच्चय जयमाला

दोहा- जिनगुण सम्पत्ति विशद, पाते जिन अर्हन्त।
कर्म घातिया नाशकर, पाते ज्ञान अनन्त।।

चौपाई

जिनवर कर्म घातिया नाशी, अनुपम केवलज्ञान प्रकाशी।
अनन्त चतुष्टय पाने वाले, सारे जग से रहे निराले।।
महिमा वचनातीत तुम्हारी, तारे हैं कई भक्त दुखारी।
तीर्थंकर पद तुमने पाया, स्वयं बोध को आप जगाया।।
सोलहकारण भाव उपाए, तीन लोक में पूज्य कहाए।
गर्भकल्याणक इन्द्र मनाते, दिव्य रत्न आके बर्षाते।।
छह महीने पहले से जानो, गर्भ के नो महीने भी मानो।
जन्म समय की महिमा न्यारी, न्हवन इन्द्र करते शुभकारी।।
देशव्रतों को प्रभु जी धारे, जग में रहते जग से न्यारे।
आप निमित्त कोई शुभ पाते, स्वयं शीघ्र वैराग्य जगाते।।

लौकान्तिक आते मनहारी, अनुमोदन करते हैं भारी।
पञ्च महाव्रत धारण करते, आप दिगम्बर दीक्षा धरते।।
तप करते होके अविकारी, कर्म निर्जरा करते भारी।
कर्म घातिया आप नशाते, अनुपम केवलज्ञान जगाते।।
समवशरण आ देव रचाते, विशद धर्म की ध्वज फहराते।
प्रातिहार्य प्रगटाते स्वामी, तीन लोक के अन्तर्यामी।।
गंधकुटी पर शोभा पाते, चतुर्दिशा से दर्श दिखाते।
खिरती दिव्य आपकी वाणी, भवि जीवों की शुभ कल्याणी।।
जग जन मैत्री भाव जगाते, चरण शरण में जो आ जाते।
उनका मोह स्वयं गल जाता, भटकों को शिवपथ मिल जाता।।
जिनगुण की सम्पत्ति पाते, व्रत करके सौभाग्य जगाते।
पाँच पञ्चमी के व्रत जानो, दशमी के दश-दश पहिचानो।।
सोलह एकम के बतलाए, चौदह चौदश के शुभ गाए।
आठ अष्टमी के शुभ भाई, त्रेसठ व्रत जानो सुखदायी।।
मन में यही भावना भावें, व्रत धारण कर पुण्य कमावें।
अनुक्रम से हो संयमधारी, शिवपद के होवे अधिकारी।।

दोहा- गुण पाने गुणगान यह, किया गया भगवान।
शुद्ध स्वभावी आत्मा, जग में रही महान।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- जो गुण गाते भाव से, बनते गुण के ईश।
अर्हन्तों के पद युगल, झुका रहे हम शीश।।

इत्याशीर्वादः

आरती

करहूँ आरती आज जिनेश्वर तुमरे द्वारे, तुमरे द्वारे स्वामी-2
करहूँ आरती..... ।। टेक।।

धर्म तीर्थ के तुम हो कर्त्ता, मुक्तिवधु के हो तुम भर्ता।
मोक्ष महल के ताज, जिनेश्वर..... ।।1।।

सोलह कारण भावना भाए, पञ्चकल्याणक तुमने पाए।
तारण तरण जहाज, जिनेश्वर..... ।।2।।

जन्म के अतिशय तुम दस पाये, केवलज्ञान के भी प्रगटाए।
तीर्थंकर भगवान, जिनेश्वर..... ।।3।।

चौदह अतिशय देव दिखाते, चौंतिस अतिशय प्रभु तुम पाते।
प्रातिहार्य भी आठ, जिनेश्वर..... ।।4।।

जिनगुण सम्पद के तुम स्वामी, त्रिभुवनपति हे अन्तर्यामी।
गुण त्रेसठ के साथ, जिनेश्वर..... ।।5।।

अनन्त चतुष्टय तुम प्रगटाते, अंतरंग लक्ष्मी को पाते।
'विशद' ज्ञान के नाथ, जिनेश्वर..... ।।6।।

जिनगुण संपद गुण के धारी, पूजा करते मंगलकारी।
पाते शिवपद राज, जिनेश्वर..... ।।7।।

प्रशस्ति

दोहा

लोकालोक के मध्य है, जम्बूद्वीप महान।
जम्बूद्वीप के मध्य है, मेरु गिरि प्रधान।।1।।
उसके दक्षिण में रहा, भरत क्षेत्र स्थान।
आर्य खण्ड है मध्य में, आर्य जनों का धाम।।2।।
आर्य खण्ड के मध्य है, भारत देश प्रधान।
तीर्थंकर चौबिस हुए, जिसमें विशद महान।।3।।
उनकी अर्चा जो करे, पावें सौख्य निधान।
इसी भावना से लिखा, जिनगुण सम्पत्ति विधान।।4।।
पच्चिस सौ सैंतिस रहा, अनुपम वीर निर्वाण।
भादव कृष्णा अमावस, सोमवार दिन मान।।5।।
पञ्च कल्याणक के तथा, प्रातिहार्य के अर्घ्य।
सोलह कारण भावना, अतिशय के भी अर्घ्य।।6।।
त्रेसठ प्रकृति नाश के, होते जिन अर्हंत।
वह गुण पाने के लिए, व्रत करते गुणवंत।।7।।
पाँच पंचमी के तथा, आठें के हैं आठ।
सोलहकारण भावना के, सोलह हैं पाठ।।8।।
जन्म के अतिशय दश कहे, उसके दश व्रत जान।
दश हैं केवलज्ञान के, उसके दश पहिचान।।9।।
चौदह अतिशय देवकृत, जग में कहे महान।
चौदह व्रत यह पूर्णकर, पाओ पुण्य निधान।।10।।
लेखन में कोइ दोष हो, उसका करो सुधार।
ज्ञानी जन पढ़कर स्वयं, करें विशद उपकार।।11।।

अथ जिनगुण सम्पत्ति मन्त्राः

प्रतिपदा (एकम) के 16 जाप्य

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा दर्शनविशुद्धि भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः।।1।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा विनयसंपन्नता भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः।।2।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा शीलव्रतेष्वनतिचार भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः।।3।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा अभीक्ष्णज्ञानोपयोग भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः।।4।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा संवेग भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः।।5।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा शक्तितस्त्याग भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः।।6।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा शक्तितस्तपो भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः।।7।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा साधुसमाधि भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः।।8।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा वैयावृत्यकरण भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः।।9।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा अर्हद्भक्ति भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः।।10।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा आचार्यभक्ति भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः।।11।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा बहुश्रुतभक्ति भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः।।12।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा प्रवचनभक्ति भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः।।13।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा आवश्यकापरिहाणि भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः।।14।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा मार्गप्रभावनायै भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः।।15।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा प्रवचनवत्सलत्व भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।16।।

पंचमी के 5 जाप्य

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा स्वर्गावतरणगर्भकल्याण जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।1।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा जन्माभिषेककल्याण जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।2।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा परिनिष्क्रमणकल्याण जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।3।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा केवलज्ञानकल्याण जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः।।4।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा निर्वाणकल्याण जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः।।5।।

अष्टमी के आठ जाप्य

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अशोकवृक्षमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।1।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सुरपुष्पवृष्टिमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।2।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा दिव्यध्वनिमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।3।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा चतुषष्टिचामरमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।4।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सिंहासनमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।5।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा भामंडलमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।6।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा देवदुंदुभिमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।7।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा छत्रत्रयमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः।।8।।

दशमी के कुल 20 जाप्य

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा निस्वेदत्वसहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।1।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा निर्मलत्वसहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।2।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा क्षीरगौररूधिरत्व सहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।3।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा समचतुरस्त्रसंस्थान सहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।4।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा वज्रवृषभनाराचसंहनन सहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।5।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सौरूप्य सहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।6।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सौगन्ध्यसहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।7।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सौलक्षण्यसहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।8।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अप्रमितवीर्य सहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।9।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा प्रियहितवादित्व सहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।10।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा गव्यूतिशतचतुष्टयसुभिक्षत्व घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।1।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा गगनगमनत्व घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।2।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अप्राणिवधत्व घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।3।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा भुक्तयभाव घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।4।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा उपसर्गाभाव घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।5।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा चतुर्मुखत्व घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।6।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वविद्येश्वर घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।7।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अच्छायत्व घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।8।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अपक्ष्मस्पंदत्व घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।9।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा समाननखकेशत्व घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।10।।

चतुर्दशी के 14 जाप्य

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वार्धमागधीयभाषा देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।1।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वजनमैत्रीभाव देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।2।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वर्तुफलादिशोभिततरूपरिणाम देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।3।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा आदर्शतलप्रतिमारत्नमयीमही देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।4।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा विहरणमनुगतवायुत्व देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।5।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वजनपरमानन्दत्व देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।6।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा वायुकुमारोपशमितधूलिकंटका देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।7।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा कृतगन्धोदकवृष्टि देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।8।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा पादन्यासेकृतपद्मानि देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।9।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा फलभारनम्रशालि देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।10।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा शरत्कालवन्निर्मलगगनत्व देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।11।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा शरन्मेघवन्निर्मलदिग्भावत्व देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।12।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा चतुर्निकायापरमरापराह्वान देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।13।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा धर्मचक्रचतुष्टय देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।14।।

आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज की आरती

(तर्ज:- माई री माई मुंडेर पर तेरे बोल रहा कागा.....)

जय-जय गुरुवर भक्त पुकारे, आरति मंगल गावे।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे ।।
गुरुवर के चरणों में नमन्.....4 मुनिवर के.....

ग्राम कुपी में जन्म लिया है, धन्य है इन्दर माता।
नाथूराम जी पिता आपके, छोड़ा जग से नाता।।
सत्य अहिंसा महाव्रती की.....2, महिमा कहीं न जाये।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे।।
गुरुवर के चरणों में नमन्.....4 मुनिवर के.....

सूरज सा है तेज आपका, नाम रमेश बताया।
बीता बचपन आयी जवानी, जग से मन अकुलाया।।
जग की माया को लखकर के.....2, मन वैराग्य समावे।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे।।
गुरुवर के चरणों में नमन्.....4 मुनिवर के.....

जैन मुनि की दीक्षा लेकर, करते निज उद्धारा।
विशद सिंधु है नाम आपका, विशद मोक्ष का द्वारा।।
गुरु की भक्ति करने वाला.....2, उभय लोक सुख पावे।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे।।
गुरुवर के चरणों में नमन्.....4 मुनिवर के.....

धन्य है जीवन, धन्य है तन-मन, गुरुवर यहाँ पधारे।
सगे स्वजन सब छोड़ दिये हैं, आतम रहे निहारे।।
आशीर्वाद हमें दो स्वामी.....2, अनुगामी बन जायें।
करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे।।
गुरुवर के चरणों में नमन्...4 मुनिवर के... जय...जय।।

रचयिता : श्रीमती इन्दुमती गुप्ता, श्योपुर